जी हां, आप समाचार चैनल देख रहे हैं

संजय द्विवेदी*

भरोसा नहीं होता कि खबरें इतनी बदल जाएँगीं। समाचार चैनलों पर खबरों को देखना अब 'मिक्स मसाले' जैसे मामला है। खबरिया चैनलों की होड़ और गलाकाट स्पर्धा ने खबरों के मायने बदल दिए हैं। खबरें अब सिर्फ सूचनाएं नहीं देती, वे 'एक्सक्लूसिव' में बदल रही हैं। हर खबर का ब्रेकिंग न्यूज में बदल जाना सिर्फ खबर की 'कलरिंग' भर का मामला नहीं है। दरअसल, यह उसके चरित्र और प्रस्तुति का भी बदलाव है । खबरें अब निर्दोष नहीं रहीं। वे अब सायास हैं, कुछ सतरंगी भी। आज यह कहना मुश्किल है कि आप समाचार चैनल देख रहे हैं या कोई मनोरंजन चैनल। कथ्य और प्रस्तुति के मोर्चे पर दोनों में बहुत अंतर नहीं दिखता।

मनोरंजन चैनल पर चल रहे कार्यक्रमों के आधार पर समाचार चैनल अपने कई घंटे समर्पित कर रहे हैं। उन पर चल रहे रियालिटी शो, नृत्य संगीत और हास्य-व्यंग्य के तमाम कार्यक्रमों की पुनःप्रस्तुति को देखना बहुत रोचक है।समाचारों की प्रस्तुति ज्यादा नाटकीय और मनोरंजक बनाने पर जोर है। ऐसे में उस सूचना का क्या हो जिसके इंतजार में दर्शक न्यूज चैनल पर आता है।

खबरों का खबर होना सूचना का उत्कर्ष है, लेकिन जब होड़ इस कदर हो तो खबरें सहम जाती हैं, सकुचा जाती हैं और खड़ी हो जाती हैं किनारे। खबर का प्रस्तोता स्क्रीन पर आता है और वह बताता है कि खबर आप किस नज़र से देखेंगे। पहले खबरें दर्शक को मौका देती थीं कि वह समाचार के बारे में अपना नज़रिया बनाए। अब नज़रिया बनाने के लिए खबर खुद बाय करती है। आपको किस ख़बर को किस नज़रिए से देखना है, यह बताने के लिए छोटे पर्दे पर तमाम सुंदर चेहरे हैं जो आपको अपनी खबर के साथ बहा ले जाते हैं। खबर क्राइम की है तो कुछ खतरनाक शक्ल के लोग, खबर सिनेमा की है तो कुछ सुदर्शन चेहरे, खबर गंभीर है तो कुछ गंभीरता का लबादा ओढ़े चेहरे! कुल मिलाकर मामला अब सिर्फ खबर तक नहीं है। ख़बर तो कहीं दूर बहुत दूर, खडी है ठिठकी हुई सी। उसका प्रस्तोता बताता है कि आप ख़बर को इस नज़र देखिए। वह यह भी बताता है कि इस खबर का असर क्या है और इस खबर को देख कर आप किस तरह और क्यों धन्य हो रहे हैं! वह यह भी जोड़ता है कि यह खबर आप पहली बार किसी चैनल पर देख रहे हैं। दर्शक को कमतर और खबर को बेहतर बताने की यह होड़ अब एक ऐसी स्पर्धा में तब्दील हो गई है जहाँ खबर अपना असली व्यक्तित्व को खो देती है और वह बदल जाती है नारे में, चीख में, हल्लाबोल में या एक ऐसे मायावी संसार में जहाँ से कोई मतलब निकाल पाना ज्ञानियों के ही बस की बात है।

हर ख़बर कैसे 'ब्रेकिंग' या 'एक्सक्लूसिव' हो सकती है, यह सोचना ही रोचक है। टीवी ने खबर के शिल्प को ही नहीं बदला है, वह बहुत कुछ फिल्मों के करीब जा रही है जिसमें नायक हैं नायिकाएं हैं और खलनायक भी। साथ में हैं कोई जादुई निदेशक। ख़बर का यह शिल्प दरअसल खबरिया चैनलों की विवशता भी है। चौबीस घंटे के हाहाकार को किसी मौलिक और गंभीर प्रस्तुति में बदलने के अपने खतरे हैं, जो कुछ चैनल उठा भी रहे हैं। पर अपराध, सेक्स, मनोरंजन से जुड़ी खबरें मीडिया की आजमायी हुई सफलता का फंडा है। हमारी नैसर्गिक वृत्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाली खबरें खबरिया चैनलों पर अगर ज्यादा जगह पाती हैं तो यह पूरा का पूरा मामला कहीं न कहीं टीआरपी से ही जाकर जुड़ता है। इतने प्रभावशाली माध्यम और उसके नीति नियामकों की यह मजबूरी और आत्मविश्वासहीनता समझी जा सकती है। बाजार में टिके रहने के अपने मूल्य हैं। ये समझौतों के रूप में मीडिया के समर्पण का शिलालेख बनाते हैं। शायद इसीलिए जनता का एजेंडा उस तरह चैनलों पर नहीं दिखता, जिस परिमाण में इसे दिखना चाहिए। समस्याओं से जूझता समाज, जनांदोलनों से जुड़ी गतिविधियाँ, आम आदमी के जीवन संघर्ष, उसकी विद्रूपताएं हमारे मीडिया पर उस तरह प्रस्तुत नहीं की जाती कि उनसे बदलाव की किसी सोच को बल मिले। पर्दे पर दिखती हैं रंगीनियाँ, अपराध का अतिरंजित रूप, राजनीति का विमर्श और सिनेमा का हाहाकारी प्रभाव। क्या खबरें इतनी ही हैं? और 'प्लेजर' की पत्रकारिता हमारे

***विभागाध्यक्ष, जनसंचार विभाग, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय**

सिर चढ़कर नाच रही है। शायद इसीलिए मीडिया से जीवन का विमर्श, उसकी चिंताएं और बेहतर समाज बनाने की तड़प की जगह सिकुड़ती जा रही है। कुछ अच्छी खबरें जब चैनल पर साया होती हैं तो उन्हें देखते रहना एक अलग तरह का आनंद देता है। एनडीटीवी ने 'मेघा रे मेघा' नाम से बारिश को लेकर अनेक क्षेत्रों से अपने नामवर रिपोर्टरों से जो खबरें करवाईं थीं वे अद्भूत थीं। उनमें भाषा, स्थान, माटी की महक, फोटोग्राफर, रिपोर्टर और संपादक का अपना सौंदर्यबोध भी झलकता है। प्रकृति के इन दृश्यों को इस तरह से कैद करना और उन्हें बारिश के साथ जोड़ना तथा इन खबरों का टीवी पर चलना एक ऐसा अनुभव है जो हमें हमारी धरती के सरोकारों से जोड़ता है। इस खबर के साथ न ब्रेकिंग का दावा था न 'एक्सक्लूसिव' का लेकिन ख़बर देखी गई और महसूस भी की गई। कोकीन लेती युवा पीढ़ी, राखी और मीका का चुंबन प्रसंग, करीना या सैफ अली खान की प्रेम कहानियों से आगे जिंदगी के ऐसे बहुत से क्षेत्र हैं जो इंतजार कर रहे हैं कि उनसे पास भी कोई रिपोर्टर आएगा और जहान को उनकी भी कहानी सुनाएगा। सलमान और कैटरीना की शादी को लेकर काफी चिंतित रहा मीडिया शायद उन इलाकों और लोगों पर भी नज़र डालेगा जो सालों साल से मतपेटियों में वोट डालते आ रहे हैं, इस इंतजार में कि इन मतपेटियों से कोई देवदूत निकलेगा जो उनके सारे कष्ट हर लेगा! लेकिन उनके भ्रम अब टूट चुके हैं। पथराई आँखों से वे किसी खबरनवीस को ताकते हैं कि कोई आए और उनके दर्द को लिखे या आवाज़ दे। कहानियों में कहानियों की तलाश करते बहुत से पत्रकार और रिपोर्टर उन तक पहुँचने की कोशिश भी करते रहे हैं। यह धारा लुप्त तो नहीं हुई है लेकिन मंद जरूर पड़ रही है। बाजार की मार, माँग और प्रहार इतने गहरे हैं कि हमारे सामने दिखती हुई खबरों ने हमसे मुँह मोड़ लिया है। हम तलाश में हैं ऐसी स्टोरी की जो हमें रातोंरात नायक बना दे, मीडिया में हमारी टीआरपी सबसे ऊपर हो, हर जगह हमारे अखबार, चैनल की ही चर्चा हो। इस बदले हुए बुनियादी उसूल ने खबरों को देखने का हमारा नज़रिया बदल सा दिया है। हम खबरें गढ़ने की होड़ में हैं, क्योंकि गढ़ी गई खबर 'एक्सक्लूसिव' तो होंगी ही। 'एक्सक्लूसिव' की यह तलाश कहाँ जाकर रुकेगी, कहा नहीं जा सकता। खबरें भी हमारा मनोरंजन करें, यह एक नया सच हमारे सामने है। खबरें मनोरंजन का माध्यम बनीं तभी तो 'बबली और बंटी' एनडीटीवी पर खबर पढ़ते नजर आए। टीआरपी के भूत ने दरअसल हमारे आत्मविश्वास को हिलाकर रख दिया है। इसलिए हमारे चैनलों के नायक हैं राखी सावंत, बाबा रामदेव और राजू श्रीवास्तव। समाचार चैनल ऐसे ही नायक तलाश रहे हैं और गढ़ रहे हैं। कैटवाक करते कपड़े गिरे हों, या कैमरों में दर्ज चुंबन क्रियाएं, ये कलंक पब्लिसिटी के काम आते हैं। लाँछन अब इस दौर में उपलब्धियों में बदल रहे हैं। 'भोगो और मुक्त हो' यही इस युग का सत्य है। कैसे सुंदर दिखें और कैसे 'मर्द' की आँख का आकर्षण बनें यही टीवी न्यूज चैनलों का मूल विमर्श है। जीवन शैली अब 'लाइफ स्टाइल' में बदल गयी है। बाजारवाद के मुख्य हथियार विज्ञापन अब नए-नए रूप धरकर हमें लुभा रहे हैं। नग्नता ही स्त्री स्वातंत्र्य का पर्याय बन गयी है। मेगा माल, ऊँची-ऊँची इमारतें, डिजाइनर कपड़ों के विशाल शोरूम, रातभर चलने वाली मादक पार्टियां और बल्लियों उछलता नशीला उत्साह। इस पूरे परिदृश्य को अपने नए सौंदर्यबोध के साथ परोसते न्यूज चैनल एक ऐसी दुनिया रच रहे है जहाँ बज रहा है सिर्फ देहराग, देहराग और देहराग। अब तो यह कहा जाने लगा है खबर देखनी है तो डीडी न्यूज पर जाओ, कुछ बहस या चर्चा देखनी है तो लोकसभा चैनल लगा लो। हिन्दी के समाचार चैनलों ने यह मान लिया है हिंदी में मनोरंजन बिकता है। अंधविश्वास बिकता है। बकवास बिकती है। राखी, राजू, सुनील पाल बिकते हैं। हालांकि इसके लिए किसी समाचार समूह ने कोई सर्वेक्षण नहीं करवाया है। किंतु यह आत्मविश्वासहीनता न्यूज चैनलों और मनोरंजन चैनलों के अंतर को कम करने का काम जरूर कर रही है। विचार के क्षेत्र में नए प्रयोगों के बजाए चैनल चमत्कारों, हाहाकारों, ठहाकों, विलापों की तलाश में हैं। जिनसे वे आम दर्शक की भावनाओं से खेल सकें। यह क्रम जारी है, जारी भी रहेगा। जब तक आप रिमोट का सही इस्तेमाल नहीं सीख जाते, तब तक चौंकिए मत क्योंकि आप न्यूज चैनल ही देख रहे हैं।

पत्रकारिता और साहित्य में अंतर यह है कि पत्रकारिता पढ़ने लायक नहीं होती और साहित्य पढ़ा नहीं जाता।

आस्कर वाइल्ड